Knowledgeable Research (An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal) **ISSN 2583-6633**
Available Online: http://knowledgeableresearch.com Vol.04, No.05, May,2025

स्वराज्य, स्वदेशी एवं राष्ट्रवाद विषयक पण्डित मदन मोहन मालवीय की अवधारणा एवं कार्य: एक ऐतिहासिक विश्लेषण

*अभिषेक कुमार तिवारी, शोधार्थी, इतिहास विभाग, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय), बिलासपुर, छत्तीसगढ़
**घनश्याम दुबे, एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय), बिलासपुर, छत्तीसगढ़

****

आमुख: *पण्डित मदन मोहन तत्कालीन भारतीय राजनीति के उच्चकोटि के चिंतक एवं सक्रिय राजनीतिज्ञ थे। उनके चिंतन के केंद्र में सनातन धर्म था, जो भारतीय समाज में सर्वधर्म समभाव एवं समाज के सभी वर्गों के उद्धार के महान आदर्शों एवं कार्यशैली का पोषक था। पण्डित मदन मोहन मालवीय आजीवन सक्रिय राजनीति एवं समाज सेवा से जुड़े रहे थे। उन्होंने अपने विचारों के माध्यम से भारतीय समाज में एक नई संचेतना एवं दिशा देने का प्रयास किया था। उन्होंने अपने स्वराज्य, स्वदेशी एवं राष्ट्रवाद सम्बन्धी विचारों से भारतीय समाज का मार्गदर्शन एवं इसे स्थापित करने के लिए भारतीय राजनीति में अग्रणी भूमिका निभाया था। उन्होंने अपने विचारों तथा कार्यों द्वारा समाज के सभी वर्गों के उद्धार एवं उन्हें सक्रिय राजनीति से जोड़ने का कार्य किया था। वे कांग्रेस के स्थापना के प्रारंभिक वर्षों से ही उससे जुड़े थे तथा अपने जीवन के अंत तक उससे जुड़े रहे थे। वे कांग्रेस के एक ऐसे नेता थे जिनके विचारों की स्वीकारोक्ति सभी दल एवं लोगो में थी। पण्डित मदन मोहन मालवीय अहिंसा के समर्थक थे लेकिन अकर्मण्य अहिंसा के खिलाफ थे। वे क्रांतिकारियों के उद्देश्यों का समर्थन करते है तथा आवश्यकता पड़ने पर उनका हर प्रकार से सहयोग भी करते है। उन्होंने अछूतों की समस्याओं के निवारण हेतु सक्रियता से कार्य किया था तथा राष्ट्रहित अम्बेडकर एवं महात्मा गाँधी के मध्य पूना पैक्ट कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाया था। प्रस्तुत शोध-पत्र में ऐतिहासिक शोध विधि का प्रयोग करते हुए, पण्डित मदन मोहन मालवीय के स्वराज्य, स्वदेशी एवं राष्ट्रवाद सम्बन्धी विचारों का ऐतिहासिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।*

मुख्य शब्द: *स्वराज्य, स्वदेशी, राष्ट्रवाद, कांग्रेस, आंदोलन, बहिष्कार, अधिवेशन*

****

प्रस्तावना:

पण्डित मदन मोहन मालवीय के राजनीतिक चिंतन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा 'स्वराज्य' था। प्रारम्भ में उन्होंने यह अधिकार अंग्रेजी साम्राज्य के भीतर, अंग्रेजी साम्राज्य का एक अंग होकर माँगा। उन्होंने अपने लेख में लिखा कि - "स्वराज्य से हमारा अर्थ है - प्रजा के चुने प्रतिनिधियों के द्वारा प्रजा की सम्मति से राज्य के प्रबंध का अधिकार और हम इसके पूर्ण योग्य है।"[1] ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधानमंत्री सर हेनरी कैवल वेनमेंन ने स्वंय कहा है कि - "सुराज्य (अर्थात् अच्छा राज्य) उस राज्य (अर्थात् स्वराज्य) के समान नहीं हो सकता, जिसमे प्रजा स्वंय अपने उपर आप शासन करती है।"[2] पण्डित मदन मोहन मालवीय ने कहा कि - "स्वराज्य जो मानवजाति के लिए सबसे बड़ा वरदान है, सबसे बड़ी नियामत है, वह केवल मनोरथ करने से नहीं मिलेगा, वरन् उसके लिये तपस्या करनी होगी।"[3] उनके विचार में देशभक्ति ही स्वराज्य की सिद्धि का पहला और सबसे बड़ा साधन है।[4] उनका विचार था कि - जहाँ तक हो सके नगर-नगर, गाँव-गाँव लोगो को 'स्वराज्य'का अर्थ, उसकी आवश्यकता और उसकी महिमा समझायी जाय, जिससे उनके हृदय में उसको पाने की उत्कट अभिलाषा उत्पन्न हो जो स्वराज्य पाने के लिए न्यायपूर्वक लगातार आंदोलन करे।"[5] पण्डित मदन मोहन मालवीय ने निरंतर जनता में स्वराज्य, स्वदेशी तथा

राष्ट्रीयता का प्रचार करते हुए उन्हें जनान्दोलन के लिए प्रोत्साहित किये थे।

स्वदेशी संबंधी विचार एवं कार्य:

पण्डित मदन मोहन मालवीय देशवासियों के सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति के लिए सतत् प्रयत्नशील थे। सन् 1905 ई. में बंग-भंग के पश्चात पण्डित मदन मोहन मालवीय ने स्वदेशी आंदोलन का समर्थन किये।[6] उन्होंने स्वदेशी आंदोलन पर विचार व्यक्त करते हुए कहा कि - "स्वदेशी आंदोलन का मुख्य उद्देश्य देश की आर्थिक दशा को सुधारना है। देश की आर्थिक दशा तभी सुधर सकती है जब देश में चीजों का व्यापार बढ़े और नित्य की आवश्यक चीजें यहां बनने लगे। जिन देशों में स्वराज्य है, उन देशों में इनकी रक्षा गवर्नमेंट कर लगाकर और रुपया देकर करती है पर इस देश में इस संबंध में गवर्नमेंट से बहुत आशा नहीं की जा सकती इसलिए आत्म-साहाय्य और स्वार्थ-त्याग से ही इनकी रक्षा करनी पड़ेगी।"[7] सन् 1906 ई. में कलकत्ता में अपने एक भाषण में उन्होंने कहा था, - "मै इसको अपने देशवासियों के प्रति अपने धार्मिक कर्तव्य का ही एक अंग समझता हूँ। मै इसे मानव जाति का धर्म और हम सबका विशिष्ट धर्म मानता हूँ। मानव जाति के धर्म की माँग है कि आप यथा सामर्थ्य स्वदेशी आंदोलन को बढ़ावा दे। अपने किसी देशवासी द्वारा निर्मित वस्त्र को खरीदने में मुझे ऐसा लगता है की मै उसे जीवित रहने के लिए कम से कम एक कौर भोजन प्राप्त करने सहायता दे रहा हूँ। हो सकता है कि सूत किसी बाहरी देश से आया हो किन्तु उसमे अपना जो श्रम लगाया है उससे उसे लाभ का आधा तिहाई अथवा कोई अंश अवश्य मिल जायेगा, जिससे वह अपना और अपने आश्रितों का पेंट भर सकेगा। जब आप देख रहे है कि आपके आस-पास लोग इतना कष्ट भोग रहे है, देश का धन बाहर जा रहा है तो लोगो की आय इतनी कम और साधन इतने अल्प है तो मै कहूँगा कि प्रत्येक उदार भावनाओं वाले व्यक्ति का यह धार्मिक कर्तव्य है कि वह जहाँ कही भी देश में निर्मित वस्तुएँ मिल सके उन्हें विदेशी चीजों की तुलना में प्राथमिकता देकर भारतीय उत्पादन को बढ़ावा दे, चाहे ऐसा करने में उसे कुछ त्याग भी करना पड़े।"[8] पण्डित मदन मोहन मालवीय का स्पष्ट विचार था कि 'स्वदेशी' के माध्यम से ही देश में आर्थिक समृद्धि एवं खुशहाली लायी जा सकती है। उनका कहना था कि, स्वदेशी के मूल में दुर्भावना अथवा घृणा नहीं है और न इससे किसी प्रकार का राजनीतिक विद्वेष है। देश की दरिद्रता को कम करने तथा देशवासियों को रोजगार और भोजन देने के लिए स्वदेशी को अंगीकार करना भारतवासियों का धार्मिक कर्तव्य है।[9] पण्डित मदन मोहन मालवीय का स्वदेशी से गहरा जुड़ाव था। उनका विचार था कि "गहरा, गाढ़ा, उत्कृष्ट, अन्य सब भावों को दबा देने वाला अपने देश का प्रेम ही स्वदेशी है।"[10] स्वदेशी में सच्ची राजभक्ति का भाव होता है। सच्ची देशभक्ति ही राजभक्ति है।[11] प्रजा भक्ति ही भक्ति राष्ट्रभक्ति है।[12] पण्डित मदन मोहन मालवीय, विष्णु गुप्त चाणक्य के उस वाक्य को स्वीकार करते हैं, जिसमें कहा गया है कि "प्रजा के सुख में राजा का सुख, प्रजा के दुःख में राजा का दुःख, प्रजा की उन्नति में राजा की उन्नति और प्रजा की अवनति में राजा की अवनति है।"[13] अर्थात्

प्रजा हिते हितं राज्ञः, प्रजानां च प्रियं हितं।
नात्मप्रियं हितं राज्ञः, प्रजानां च हिते हितम्।

पण्डित मदन मोहन मालवीय 'स्वदेशी' को लोगों के आचरण में समाहित करवाने के लिए प्रतिबद्ध थे। वे 'स्वदेशी' की माँग कांग्रेस के विभिन्न अधिवेशनों से लेकर प्रांतीय तथा केन्द्रीय असेंबली तक पुरजोर तरीके से करते रहे थे। इसके अलावा वे व्यक्तिगत रूप से भी जन-संवाद कर लोगों को स्वदेशी के प्रति जागृत किया था। पण्डित मदन मोहन मालवीय के स्वदेशी के प्रति इन्ही विचारों का प्रभाव 19 मई, 1916 ई.[16] को गठित भारतीय औद्योगिक

आयोग में भी देखने को मिलता है। इस आयोग के लिए पण्डित मदन मोहन मालवीय ने जो स्मरण-पत्र तैयार किया था, उसमे उन्होंने इस बात पर बल दिया था कि देश में यथोचित आधार पर उद्योगों का विकास किया जाय। उनका विश्वास था कि उद्योगों के लिए आवश्यक पूँजी प्रयत्न करने पर देश में ही एकत्र की जा सकती है।[15]

1907 ई. तक आते-आते सरकार के दमनात्मक रवैये (विशेषकर पंजाब और बंगाल में) के कारण भारत की राजनैतिक स्थितियाँ अत्यन्त गंभीर हो गयी। एक तरफ गरम कांग्रेसी दल के नेताओं द्वारा स्वदेशी एवं बहिष्कार आन्दोलन का कार्यक्रम जोर-शोर से चलाया जा रहा था, वहीं दूसरी तरफ पंजाब के कुछ नेताओं द्वारा '1857 ई. की क्रांति' की स्वर्ण-जयंती मनाने की तैयारिया की जा रही थी। इन सामूहिक गतिविधियों को तत्कालीन भारत की सरकार ने बलपूर्वक कुचल दिया। इससे जुड़े विभिन्न नेताओं की बिना किसी ठोस कारण गिरफ्तारियाँ भी किया जाने लगा तथा राजनैतिक वातावरण को भयाक्रान्त करने का असफल प्रयास सरकार द्वारा किया गया। इन सभी घटनाओं का गहरा प्रभाव कांग्रेस की राजनीति पर भी पड़ा था। एक तरफ नरम कांग्रेसी दल के नेता प्रारंभ से ही स्वदेशी एवं बहिष्कार जैसे आंदोलोनों के खिलाफ थे तो वहीं दूसरी तरफ गरम दलीय कांग्रेसी राजनीतिज्ञ इस मामले में पीछे हटने को तैयार नहीं थे। कांग्रेस के अंदर इन दोनों गुटों का मतभेद 1905 ई. तथा 1906 ई. के कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में खुलकर सामने आ चुका था। 1907 ई. के सूरत में होने वाले कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में पूराने कांग्रेसी नेता 1906 ई. के कलकत्ता अधिवेशन में पारित कुछ प्रस्तावों का बिल्कुल भी समर्थन करना नहीं चाहते थे। इस तनातनी के वातावरण में पण्डित मदन मोहन मालवीय एवं लाला लाजपत राय समझौते के पक्ष में थे।[16] वे उसे राष्ट्रहित में आवश्यक समझते थे। लालाजी ने तिलक महाराज से कह दिया था कि वे इस अवसर पर कांग्रेस का अध्यक्ष बनना नहीं चाहते तथा तिलक महाराज भी इस आश्वासन पर कि राष्ट्रीय शिक्षा, स्वदेशी और बाइकाट पर सन् 1906 ई. के प्रस्ताव फिर स्वीकार होगें और अध्यक्षीय भाषण में इनकी कोई प्रतिकूल आलोचना नहीं होगी, अपना अध्यक्ष सम्बन्धी प्रस्ताव वापस लेने को तैयार थे।[17] लेकिन दुर्भाग्य से इनके बीच किसी प्रकार का कोई भी समझौता नहीं हो सका। 1907 ई. के कांग्रेस के अधिवेशन मे जैसे ही रासबिहारी घोष का नाम अध्यक्ष के लिए प्रस्तावित किया गया वैसे ही गरम दल द्वारा जोरदार विरोध किया गया था। इसके बाद तो कांग्रेस का गरम तथा नरम दोनों दल वालों का विरोध स्पष्ट रूप से सामने सामने आ गया। दोनों पक्षों की तरफ से कुर्सियाँ तथा जूते फेंक-फेंक कर मारी जाने लगी। कांग्रेस का पंडाल थोड़ी देर के लिए हो-हल्ले, गाली-गलौज और मार-पीट का अखाड़ा बना रहा।[18] थोड़ी देर पश्चात पुलिस ने मोर्चा संभाला एवं सारे पंडाल को खाली करने का आदेश दिया था। उस भगदड़ में सब लोग पंडाल छोड़-छोड़कर चले गए। केवल एक गौर वर्ण धवल वस्त्रधारी व्यक्ति खंभे के सहारे खड़ा आंसू बहाता रहा, वह थे मालवीय जी।[19] मालवीयजी के लिए तो वह घटना इतनी असह्य थी कि वे छयालीस वर्ष की आयु में पंडाल में ही एक खम्भे से लगे बहुत देर तक रोते रहे और उनके ज्येष्ठ पुत्र रमाकान्तजी ने बहुत कठिनाई से उन्हें उनके निवासस्थान पर ले जा सके।[20] कांग्रेस के इस विभाजन पर पण्डित मदन मोहन मालवीय अत्यंत दुःखी एवं निरश हुए। वे भारत की राजनीतिक प्रगति के लिए कांग्रेस जैसी संस्था को बनाये रखना आवश्यक समझते थे। उनका विचार था कि - "सब मिलकर काम करे, कांग्रेस की एकता बनाये रखे, सदैव विचार-शक्ति, दूरदर्शिता, कार्यकुशलता और एकता से काम ले, उन लोगो का सत्कार करे जिन्होंने कांग्रेस के लिए कुछ किया है या कर रहे है और उन लोगो में उत्साह उत्पन्न करे जो कुछ कर सकते है।"[21] पण्डित मदन मोहन मालवीय

राष्ट्रीय राजनीतिक सफलता तथा सामाजिक स्तर पर परिवर्तन के लिए स्वदेशी आंदोलन के साथ-साथ रचनात्मक कार्यक्रमों को अत्यंत महत्वपूर्ण एवं आवश्यक समझते थे।

राष्ट्रवाद संबंधी विचार:

पण्डित मदन मोहन मालवीय व्यापक सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के पक्षधर थे। "भारतीय राजनीतिक विचारों के इतिहास में मालवीय जी का मुख्य योगदान उनका व्यापक राष्ट्रवाद का सिद्धांत था। स्टाइन, हार्डेनवुर्ग, गेटे और फिक्टे की भाँती मालवीय जी भी संस्कृति को राष्ट्रवाद का आधार मानते थे। प्राचीन भारत की सांस्कृतिक उपलब्धियों के लिए उनके मन में गहरी श्रद्धा थी, साथ ही साथ उन्हें देश की भावी प्रगति और सृजनात्मक शक्तियों में भी विश्वास था। वे शुद्ध भौतिकवादी अथवा ऐहिकवादी राष्ट्रवाद का समर्थन नहीं करते थे। वें हिंदू संस्कृति पर आधारित राष्ट्रवाद के सिद्धांत को मानते थे, किंतु साथ ही साथ देश के अन्य संप्रदायों के प्रति निरपेक्षतः उदय तथा न्यायोचित व्यवहार करने के पक्ष में थे।"[22] राष्ट्रीयता की व्याख्या करते हुए वे कहते हैं कि - "राष्ट्रीयता उस भावना का नाम है, जो देश के संपूर्ण निवासियों के हृदय में देशहित की लालसा से व्याप्त हो, जिसके आगे अन्य भावों की श्रेणी नीची ही रहती है।"[23] पण्डित मदन मोहन मालवीय सदैव अपने लेखों के द्वारा भारतीय जनसमाज का ध्यान राष्ट्रीयता की ओर आकर्षित करते रहते थे। उनके विचार में राष्ट्रीयता उस भावना का नाम है जो देश के सम्पूर्ण निवासियों के हृदय में देश-हित की लालसा से व्याप रही हो, जिसके आगे अन्य भावों की श्रेणी नीची ही रहती है।[24] वे चाहते थे कि - 'देश ही समस्त देशवासियों के प्रेम और भक्ति का विषय' बन जाय, ' मतभेद, वर्णभेद और जातिभेद के होते हुए भी राष्ट्रीयता का श्रेष्ठ भाव देशव्यापी' हो जाय और इतना बढ़ जाय कि उसके आगे अन्य भावों का दर्जा नीचा लगे।[25] उन्होंने राष्ट्रीयता के विषय पर सरकार तथा जनता का ध्यानाकर्षित कराते हुए लिखा कि - राष्ट्रीयता ही जापान, इंग्लैंड आदि देशो की उन्नति का मुख्य कारण है और वही भारत का भी उद्धार कर सकती है।[26] पण्डित मदन मोहन मालवीय व्यक्तिगत स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक थे। उनका विचार था कि - "प्रत्येक व्यक्ति और जनसमूह को सम्मानित जीवन व्यतीत करने का, संस्था संगठित करने का, सभा और प्रदर्शन आयोजित करने का, भाषण करने का, अपने विचारों को प्रकाशित करने का पूर्ण अधिकार है, जो न्याय संगत है। अतः इन अधिकारों की रक्षा कानून द्वारा अवश्य की जानी चाहिए।"[27] दिल्ली में आयोजित दिसम्बर सन् 1918 ई. के कांग्रेस अधिवेशन के अपने अध्यक्षीय सम्बोधन में पण्डित मदन मोहन मालवीय ने कहा कि आत्मनिर्णय का सिद्धांत भारत में भी लागू किया जाना चाहिए और नए विधान की भूमिका में इसे व्यक्त करते हुए यह स्पष्ट किया जाय कि पूर्ण उत्तरदायित्व की ओर अगले कदमों के निर्णय में भारतीय जनता के प्रतिनिधियों की प्रभावकारी अवाज (अधिकार) होगी। उन्होंने इस बात पर दुःख प्रकट किया था कि सन्धि कांफ्रेंस में भारत के प्रतिनिधि को नियुक्त करते समय जनता के प्रतिनिधियों से इसके सम्बन्ध में कोई राय नहीं ली गयी।[28]

"स्वशासन ही हमारी शिकायत का इलाज है।"[29] और हम राष्ट्रीय आत्मविकास का सुअवसर चाहते है।"[30] रोलेट कमेटी ने जिस परिस्थिति पर खेद प्रकट किया है, उसका इलाज दमनकारी कानून बनाना नहीं है, बल्कि विस्तृत और उदार सुधारों को देना है, जो असंतोष के मूल कारण को दूर करेगा और भारतीय जनता में संतोष पैदा करेगा।[31] पण्डित मदन मोहन मालवीय ने इस अधिवेशन के अंत में धन्यवाद ज्ञापित करते हुए मुसलमान और किसान प्रतिनिधियों की उपस्थिति पर विशेष रूप से संतोष एवं हर्ष प्रकट करते हुए कहा कि - "ईश्वर की सृष्टि में मनुष्य-मनुष्य में कोई भेंद नहीं है। लोग पुरुष और स्त्री में भेंद करते है, पर जहाँ तक ईश्वर

की ज्योति का प्रश्न है, दोनों में बिल्कुल भेद नहीं है।"[32] उन्होंने इस अधिवेशन में स्त्रियों के कार्य की प्रशंसा करते हुए, उन्हें समाज तथा देशहित के कार्यों में सक्रियतापूर्वक भागीदारी निभाने के लिए प्रोत्साहित भी किया था। उन्होंने कहा - "स्त्रियों को देशहित के लिए काम करना चाहिए, उन्हें भय छोड़ देना चाहिए। उन्हें विश्वास करना चाहिए कि ईश्वर का तत्व उनमे है और उन्हें अपनी रक्षा के लिए दूसरो की आवश्यकता नहीं है। जब तक प्रगति के क्षेत्र में वे आगे नहीं आती, तब तक देश के लिए उन्नति करना सम्भव नहीं है।"[33]

16 अगस्त, 1932 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री रेमजे मैक्डोनेल द्वारा अल्पसंख्यक प्रतिनिधित्व (कम्युनल अवार्ड) की घोषणा के बाद गाँधी जी ने इसके खिलाफ अनशन प्रारम्भ किया। पण्डित मदन मोहन मालवीय की मध्यस्थता के बाद डॉ. अम्बेडकर एवं गाँधी जी में 'यरवदा पैक्ट (पूना पैक्ट)' पर हस्ताक्षर हुआ तथा फरवरी, 1935 में मालवीय जी ने साम्प्रदायिक निर्णय विरोधी कान्फ्रेंस का आयोजन कराया। 9 नवम्बर, 1933 ई. को जब गाँधी जी ने 'हरिजन सेवक संघ' बनाया और अस्पृश्यता के खिलाफ आन्दोलन प्रारम्भ किया तब पण्डित मदन मोहन मालवीय ने उनके इस आन्दोलन का पूर्ण समर्थन किया था। पण्डित मदन मोहन मालवीय के नेतृत्व में सनातन धर्म महासभा ने अन्त्यजोद्धार का समर्थन करते हुए निर्णय लिया कि अस्पृश्य कही जाने वाली जातियों को सर्वसाधारण कुएँ, तालाब, बावली, बाग, सड़क, सराय, श्मशान घाट तथा सर्वसाधारण स्कूलों और सभाओं में जाने के लिए कोई रोक नहीं होनी चाहिए।[34] इसी प्रकार कई और सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए उन्होंने राजनीतिक मंचो से प्रयास किया।

स्वराज्य दर्शन:

पण्डित मदन मोहन मालवीय का 'स्वराज्य' का दर्शन भारत के गौरवशाली विविधता को अपने अंदर समाहित किए हुए था। वे कहते हैं कि - "हिंदुस्तान एक महान देश है और उसमें सब मतों के लोग रहते हैं। हम सबका कर्तव्य है कि हम भारत माता की सेवा करें। परंतु साथ ही साथ इस कर्तव्य का विरोध किए बिना हमारा यह भी धर्म है कि हम अपने उस विभाग की भी सेवा करें जिससे हमारा विशेष धर्मगत संबंध है। यह सेवा हमारे जातीय कर्म के विरुद्ध नहीं है, हमें यह भली प्रकार सोच लेना चाहिए कि हमें अपनी मातृभूमि में रहना है और यही की मिट्टी में हमारी भस्म अथवा मिट्टी मिलेगी। हम सब एक परमात्मा की संतान हैं और एक ही मातृभूमि में हमारा जन्म हुआ है।"[35] पण्डित मदन मोहन मालवीय का मूल लक्ष्य राष्ट्र की स्वतंत्रता एवं स्वराज्य की प्राप्ति था। इस पुनीत कार्य के लिए वे सभी जाति, धर्म एवं पंथ को मानने वाले लोगो से अपने मतभेद भुलाकर एकसाथ कार्य करने का आह्वान किया था। अगस्त, 1923 ई. में पण्डित मदन मोहन मालवीय ने हिंदू महासभा के सातवें साधारण अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए, उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में हिन्दू जाति की प्राचीनता और गौरव की बात की और साथ ही हिन्दू-मुस्लिम एकता की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि स्वराज्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि हिन्दू-मुसलमान अपने भेदभाव मिटाकर देश के लिए साथ मिलकर आगे आये।[36] पण्डित मदन मोहन मालवीय ने 1929 ई. में जोर देकर कहा था कि - "आप स्वतंत्रता चाहते हैं, स्वशासन चाहते हैं तो इसके लिए त्याग करने के लिए तैयार हो जाइए। आप अपने में स्वातंत्र्य प्रेम और मातृभूमि के गौरव के लिए त्याग की भावना पुष्ट करें। इस प्रकार हम पुनः एक राष्ट्र बन सकेंगे। राष्ट्रीयता द्वारा ही विभिन्न समुदायों में एक एकीकृत भावना जागृत होती है, जो विकास और समृद्धि के लिए आवश्यक है।"[37] पण्डित मदन मोहन मालवीय अहिंसा के समर्थक थे लेकिन उनके लिए अहिंसा का अर्थ अकर्मण्यता नहीं था। इसलिए उनके वक्तव्यों में कई बार उग्र राष्ट्रवाद की भी झलक मिलती है। वें सरकारी

दमन अत्याचार एवं निरंकुशता की अतिशयता पर कभी-कभी क्रांतिकारियों की तरह उबल पड़ते और हिंसा का परोक्ष रूप से ही सही, समर्थन कर बैठते थे।[38] सन् 1931-32 ई. जब भगत सिंह, राजगुरु एवं सुखदेव को फांसी दी गयी, उन्होंने कांग्रेस कमेटी की ओर से बड़े ही संतप्त हृदय से इन वीर शहीदों को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की थी और नौजवानों के क्रांतिकारी कार्यों के लिए सरकार की स्वराज्य विरोधी रवैया को ही उत्तरदायी ठहराया।[39] उनका स्पष्ट मत था कि- "गाढ़ देशभक्ति से विषय एकता उत्पन्न होती है, एकता से राष्ट्रीयता का भाव और राष्ट्रीयता के भाव से देश की उन्नति होती है।"[40] पण्डित मदन मोहन मालवीय के शब्दों में सच्चे देशभक्त वें हैं, "जो कुछ करें, धरे, सब कुछ देश के लिए हो और देश के कार्य के लिये प्रति क्षण तत्पर रहें एवं एकाकी लगन से देश के ही ध्यान और उपासना में लगे रहे।"[41] वे यह चाहते थे कि प्रत्येक देशवासी की अंतरात्मा में यह भाव जग जाए कि "देश की उन्नति में अपनी उन्नति, देश के जीवन में अपना जीवन और देश की मृत्यु में अपनी मृत्यु समझें।"[42] पण्डित मदन मोहन मालवीय अपने सम्पूर्ण राजनीतिक जीवन में निःस्वार्थ भाव से राष्ट्र के उत्थान एवं समाज के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयासरत रहे थे।

अध्ययन का महत्व:

पण्डित मदन मोहन मालवीय को एक ऐसे राजनेता के रूप में देखा गया है जिनकी राजनीति केवल एक समुदाय के आसपास ही केन्द्रित रहती है। लेकिन यह धारणा पूर्णतया निराधार एवं गलत है। प्रस्तुत अध्ययन द्वारा यह समझने में सहायता होगी कि कैसे पण्डित मदन मोहन मालवीय ने अपने राजनीति के आरंभिक काल से ही भारत में स्वदेशी, स्वराज्य एवं राष्ट्रीय चेतना के विकास हेतु कार्य किया था। इस अध्ययन द्वारा पण्डित मदन मोहन मालवीय की राष्ट्रीय राष्ट्रवादी नेता की सर्वमान्य व्यक्तित्व को उजागर करने में सहायता मिलता है। इसके साथ ही यह अध्ययन वर्तमान भारतीय समाज में उनके स्वदेशी, स्वराज्य एवं राष्ट्रवाद संबंधी विचारों को स्थापित करने में सहायक है।

उद्देश्य :

- पण्डित मदन मोहन मालवीय के स्वदेशी, एवं स्वराज्य सम्बन्धी विचारों का समीक्षा तथा उसके प्रभाव का अध्ययन करना।
- पण्डित मदन मोहन मालवीय के राष्ट्रवाद सम्बन्धी विचारों के मूलतत्व का अध्ययन करना।

परिकल्पना:

- पण्डित मदन मोहन मालवीय ने भारतीय समाज में स्वदेशी, स्वराज्य तथा राष्ट्रवाद संबंधी विचारों को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाया था।

शोध पद्धति :

प्रस्तुत अध्ययन से सम्बन्धित तथ्य प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के स्त्रोतों से लिया गया है। प्राथमिक स्त्रोत के रूप में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी अधिवेशन का रिपोर्ट, संयुक्त प्रान्त कांग्रेस कमेटी अधिवेशन का रिपोर्ट, राष्ट्रीय अभिलेखागार नई दिल्ली, उत्तर प्रदेश राज्य अभिलेखागार लखनऊ, मालवीय अनुशीलन केंद्र काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उ.प्र., में उपलब्ध सम्बन्धित रिपोर्ट, प्राइवेट पेपर्स तथा तत्कालीन प्रमुख समाचार पत्रों का उपयोग किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन के द्वितीयक स्त्रोत के रूप में सरकारी एवं निजी प्रकाशकों की पुस्तको का उपयोग किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में ऐतिहासिक विधि का उपयोग करके तथ्यों का विश्लेषण किया गया है। इसके साथ ही लाइब्रेरी एवं डेस्क विधि का भी उपयोग किया गया है।

निष्कर्ष:

पण्डित मदन मोहन मालवीय आजीवन भारतीय समाज तथा राष्ट्र की निःस्वार्थ सेवा किया था। वे सनातन धर्म को अपने चिंतन के केंद्र में रखते हैं। जिसके कारण उनके राजनीतिक

चिंतन में भी अध्यात्म की झलक दिखलाई पड़ती है। उनकी स्वदेशी के प्रति प्रतिबद्धता सामान्य जन से लेकर राष्ट्रीय नेताओं तक के लिए राष्ट्रहित के कार्यों के संबंध में प्रेरणा एवं मार्गदर्शन का कार्य करती थी। पण्डित मदन मोहन मालवीय आजीवन स्वदेशी की भावना को देशभक्ति का महत्वपूर्ण हिस्सा मानते रहे तथा समाज में उसके संचार के लिए पूर्ण मनोयोग से प्रयासरत रहे। उन्होंने स्वराज्य की स्थापना के लिए पूर्ण प्रयास किया था। उनहोंने स्वराज्य दर्शन का अर्थ व्यापक एवं वृहद था। जिसमे सभी धर्म, पंथ, मजहब, जाति तथा वर्ग के लोग का समान स्थान था। उन्होंने स्वदेशी आंदोलन तथा स्वराज्य के पक्ष में लेजिस्लेटिव कौंसिल से लेकर कांग्रेस के विभिन्न अधिवेशनों में अपने विचार पुरजोर तरीके से रखा था, जिसके कारण स्वदेशी आंदोलन एवं स्वराज्य की माँग का महत्व आम जनमानस ने समझा था। पण्डित मदन मोहन मालवीय ने कांग्रेस के भीतर नरम एवं गरम दल के मध्य सामंजस्य स्थापित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाया था। वे क्रांतिकारियों के सभी कार्यों से भले ही सहमत नहीं थे लेकिन वे क्रांतिकारियों से पूरी सहानभूति तथा उनकी मदद सदैव किया करते थे। उन्होंने सनातन समाज में संभावित विखंडन को रोकने के लिए, दलितों के सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर तथा महात्मा गाँधी के मध्य समझौता कराने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाया था। वे सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के साथ-साथ रचनात्मक राजनीतिक एवं आर्थिक राष्ट्रवाद के पोषक थे। वे सदैव राष्ट्र के उत्थान निमित्त सभी वर्गों को साथ लेकर सामूहिक प्रयास के पक्षधर थे।

संदर्भ-सूची:

1. पद्मकांत मालवीय, मालवीय जी के लेख, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1961, पृ.74.
2. पद्मकांत मालवीय, पूर्वोक्त, पृ.64.
3. पद्मकांत मालवीय, पूर्वोक्त, पृ.78.
4. वहीं.
5. पद्मकांत मालवीय, पूर्वोक्त, पृ.79.
6. द आनरेबुल पण्डित मदनमोहन मालवीय: हिज लाइफ एंड स्पीचेज, गणेशन एंड कंपनी, मद्रास, द्वितीय संस्करण, 1918, पृ. 414, 425.
7. द आनरेबुल पण्डित मदनमोहन मालवीय: हिज लाइफ एंड स्पीचेज, पूर्वोक्त, पृ. 85.
8. द आनरेबुल पण्डित मदनमोहन मालवीय: हिज लाइफ एंड स्पीचेज, पूर्वोक्त, पृ.548.
9. द आनरेबुल पण्डित मदनमोहन मालवीय: हिज लाइफ एंड स्पीचेज, पूर्वोक्त, पृ.549.
10. पद्मकांत मालवीय, पूर्वोक्त, पृ. 30.
11. पद्मकांत मालवीय, पूर्वोक्त, पृ. 111.
12. वहीं.
13. वहीं.
14. रिपोर्ट, भारतीय औद्योगिक आयोग 1916-18, 1918, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली, पृ.XV.
15. रिपोर्ट, भारतीय औद्योगिक आयोग 1916-18, 1918, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली, पृ. 269.
16. मुकुट बिहारी लाल, महामना मदन मोहन मालवीय - जीवन और नेतृत्व, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, 1978, पृ. 85.
17. वहीं.
18. सीताराम चतुर्वेदी, आधुनिक भारत के निर्माता मदनमोहन मालवीय, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रलय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2014, पृ.64.
19. वहीं.

20. मुकुट बिहारी लाल, पूर्वोक्त, पृ.87.
21. अभ्युदय, पौष कृष्ण 30, सम्वत् 1964, मालवीय अनुशीलन केंद्र काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, पृ.05-06.
22. वी. पी. वर्मा, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 1971, पृ. 280.
23. लक्ष्मी शंकर व्यास, महामना मालवीय और हिन्दी पत्रकारिता, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, 1987, पृ. 61.
24. पद्मकांत मालवीय, पूर्वोक्त, पृ.99.
25. वहीं.
26. पद्मकांत मालवीय, पूर्वोक्त, पृ.104.
27. मुकुट बिहारी लाल, पूर्वोक्त, पृ. 420.
28. रिपोर्ट, इंडियन नेशनल कांग्रेस, 1918 का अधिवेशन, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली, पृ.23-26.
29. रिपोर्ट, इंडियन नेशनल कांग्रेस, 1918 का अधिवेशन, पूर्वोक्त, पृ.38.
30. वहीं.
31. रिपोर्ट, इंडियन नेशनल कांग्रेस, 1918 का अधिवेशन, पूर्वोक्त, पृ.39.
32. रिपोर्ट, इंडियन नेशनल कांग्रेस, 1918 का अधिवेशन, पूर्वोक्त, पृ.150.
33. रिपोर्ट, इंडियन नेशनल कांग्रेस, 1918 का अधिवेशन, पूर्वोक्त, पृ.151.
34. मुकुट बिहारी लाल, पूर्वोक्त, पृ.517
35. विद्युत वर्मा, महामना चिन्तन आलोक, महामना मालवीय मिशन, लखनऊ, 2001, पृ. 43.
36. सीताराम चतुर्वेदी, महामना पं. मदनमोहन मालवीय, खण्ड-3, तारा ग्रंथालय, काशी, 1936 पृ.101.
37. कृष्णदत्त त्रिपाठी एवं सत्येन्द्र द्विवेदी, भारतीय राष्ट्रवाद, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2006, पृ. 101.
38. उमेशदत्त तिवारी, पूर्वोक्त, पृ.25.
39. वहीं.
40. पद्मकांत मालवीय, पूर्वोक्त, पृ. 100.
41. पद्मकांत मालवीय, पूर्वोक्त, पृ. 108.
42. वहीं.

Corresponding Author: **अभिषेक कुमार तिवारी**
E-mail: at1227618@gmail.com
Received: 06 May 2025; Accepted: 26 May 2025; Available online: 31 May 2025
Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-Noncommercial 4.0 International License